विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक १३५-३६ | वाराणसी, गुरुवार, २६ नवम्बर, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

राष्ट्रीय साहित्यकार-परिषद् में — अमृतसर ११-११-'५९

साहित्य का धर्म

मैं शब्दों में बयान नहीं कर सकता कि आप लोगों के दर्शनों से मुझे कितना हर्ष हो रहा है। वैसे तो मेरे लिए सारी दुनिया नमस्कार-भाजन है। सबको नमस्कार करना ही मैंने अपना धर्म माना है और दर्शन-लालसा से आठ साल से लगातार घूम रहा हूँ, लेकिन आप मेरे लिए विशेष आदर और नमस्कार के भाजन हैं। बहुत खुशी की बात है कि अभी आपसे मिलने का सौभाग्य मुझे हासिल हो रहा है। अब तक मुझे एक-एक भाषा के साहित्यिकों से मिलने का मौका मिला था। लेकिन यहाँ अनेक भाषाओं के साहित्यिक इकट्ठा हुए हैं तो आपने बड़ी कृपा की, ऐसा मुझे नम्रतापूर्वक कहना चाहिए।

मैं साहित्यिकों की कद्र करता हूँ

'साहित्यिक' शब्द आज जिस अर्थ में माना जाता है, उस अर्थ में मैं अपनी गिनती साहित्यिकों में नहीं कर सकता। लेकिन साहित्यिकों का भक्त होने का दावा अवश्य करता हूँ। परमेश्वर की कृपा से मुझे अपने देश और दुनिया की प्राचीन और अर्वाचीन अनेक भाषाओं के अच्छे साहित्य से परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला है। मैं साहित्यिकों की शक्ति को बहुत अच्छी तरह पहचानता हूँ और उसकी बहुत कद्र करता हूँ। साहित्यिक स्वयं अपनी शक्ति को उतना नहीं जानते, क्योंकि जिसके पास जो चीज होती है, उसकी कीमत वह कभी-कभी पूरी तरह नहीं समझ पाता। इसलिए रस-ग्रहण करनेवाला उसकी अधिक कीमत समझता हो, यह सम्भव है। आप अपनी शक्ति का जितना एहसास नहीं करते होंगे, उतना मैं करता हूँ, इसलिए हमारी यात्रा जहाँ-जहाँ चली, जिन-जिन सूबों में चली, वहाँ अगर मौका मिला तो मैंने साहित्यिकों की मंडली में नम्रतापूर्वक अपने विचार पेश करने और उनका मार्गदर्शन प्राप्त करने की कोशिश की।

साहित्यिकों के तीन वर्ग

मैं साहित्यिक को द्रष्टा समझता और मार्गदर्शक मानता हूँ। ऋग्वेद में वर्णन आया है—'शिक्षा पथस्य गातुवित्' मार्ग जाननेवाले, मार्ग ढूँढ़नेवाले और मार्ग दिखानेवाले, ऐसे तीन प्रकार के लोग होते हैं। साहित्यिकों की गिनती इस त्रिविध वर्ग में होती है। कुछ मार्ग ढूँढ़नेवाले हैं, जो बहुत ही ऊँची कोटि के होते हैं। कुछ मार्ग जाननेवाले हैं, जो दूसरे दर्जे की पदवी प्राप्त करते हैं और कुछ मार्ग दिखानेवाले हैं, जिनको तीसरे दर्जे की पदवी प्राप्त है। ये तीनों पदवियाँ जैसे हिमालय के ऊँचे-से-ऊँचे शिखर होते हैं, वैसी ही कुछ कम-बेसी होती हैं। सबसे अधिक योग्यता मैं उनकी मानता हूँ, जो मार्ग ढूँढ़नेवाले होते हैं, नये मार्ग खोजते हैं। बहुत हिम्मत से आगे बढ़ते जाते हैं, अपनी चीज नहीं खोते और दुनिया की मार खाते रहते हैं। दूसरे दर्जे के वे होते हैं, जो नये मार्ग की खोज नहीं करते, बल्कि जो पुराना मार्ग बन चुका है और काफी सुरक्षित है, लेकिन लोग उसे नहीं जानते और बीहड़ जंगलों में भटकते रहते हैं, उसे जानते हैं। तीसरी पदवी उनको प्राप्त है, जिनको यह प्रेरणा हुई है कि लोगों को मार्ग बतायें। चाहे वह मार्ग सबसे ऊँचा न हो, लेकिन आज लोग भटकते रहते हैं, इसलिए उन्हें अच्छे मार्ग पर लाय, उन्हें मार्ग बतायें। ऐसे त्रिविध साहित्यिक होते हैं और उनका मार्ग-दर्शन प्राप्त करने का भाग्य मुझे हर प्रदेश में हासिल हुआ है।

भगवान मेरे लिए सर्वाधिक व्यक्त

मेरे सामने जो समस्याएँ हैं, मैं उन्हें आपके सामने रखूँगा। अभी यहाँ मैं मीरा का भजन सुन रहा था, जिसमें वर्णन किया गया है कि उसको परमात्मा में लगन है और हरिगुण गाने के सिवा और कोई बात उसे सूझती ही नहीं। भजन सुनते-सुनते मैं अपने लिए सोचने लगा कि जो नसीब मीरा को हासिल था, वही भगवत्-कृपा से मुझे भी हासिल है। मेरी यात्रा चलती है। उसके साथ भूदान-ग्रामदान आदि शब्द चलते हैं। वे शब्द 'करेण्ट क्वायन' बन गये हैं। लेकिन मेरे मन में सिवा इसके कि मैं भगवान का गुणगान करने की चेष्टा करता रहूँ, उसकी सेवा में लगा रहूँ, और कोई बात नहीं है। एक यही विचार मेरे मन में है। भगवान मेरे लिए अव्यक्त नहीं रहे, व्यक्त हो गये हैं, बल्कि मामूली व्यक्त पदार्थ से ज्यादा व्यक्त हो गये हैं। वे मुझे हिलाते हैं, डुलाते हैं। कल तो मैं ऐसा गिर गया था कि सब ताज्जुब ही करते रहे कि इसका सिर कैसे नहीं फूटा! मैं ऐसे ढंग से गिरा कि सिर फूटना ही चाहिए था। सिर फूटता तो भगवान का आशीर्वाद समझता। लेकिन सिर नहीं फूटा और आज मैं आपकी सेवा में उपस्थित हूँ—यह भी मैं भगवान की कृपा और उसका आशीर्वाद ही समझता हूँ।

www.vinoba.in

मजहब और सियासत की ताकतें आज खत्म

दुनिया में आज तक जो ताकतें काम करती थीं, उनमें से कई ताकतें अब क्षीण हो रही हैं। कुछ नयी ताकतें जोर पकड़ रही हैं, कुछ पुरानी भी अपना बल दिखानेवाली हैं। मेरे निरीक्षण के अनुसार जो ताकतें टूट रही हैं, वे बहुत बड़ी ताकतें थीं। आज भी कुछ हद तक वे मिटी हैं, ऐसा नहीं कह सकते। लेकिन वे खत्म होनेवाली हैं, टिकनेवाली नहीं हैं। उनकी जिंदगी समाप्त हो गयी है।

उनमें एक ताकत है मजहब की। इन मजहबों ने बहुत बड़ा काम किया है—मनुष्य के अन्तःस्रोत ढूँढ़ने की कोशिश की है। उन अन्तःस्रोतों में एकवाक्यता, सामंजस्य लाने और मनुष्यमात्र को इकट्ठा करने की कोशिश की है। मनुष्य को कुछ हद तक इकट्ठा करने में आज तक वे समर्थ भी हुई हैं। लेकिन जहाँ उन्होंने मनुष्यों को इकट्ठा कर लिया, वहीं उन्हें तोड़ा भी है। अब तो वे फिरके, पंथ बन गये हैं, घनीभूत हो गये हैं, बहते हुए चश्मे नहीं रहे। वे स्थिर हो गये हैं और जहाँ वे स्थिर हो गये, वहीं मनुष्यों को इकट्ठा करने का उनका कार्य समाप्त हो गया। इसका अर्थ इतना ही मानना होगा कि उन्होंने जो किया, उसका हम उपकार मानते हैं। हम उनके कृतज्ञ हैं। लेकिन आगे विज्ञान बढ़ रहा है, इसलिए उनका उपयोग खत्म है।

जैसे मजहब आंतरिक क्षेत्र में काम करता है, वैसे ही बाहरी क्षेत्र में काम करनेवाली ताकत है सियासत। उच्छृंखल या बिखरे हुए, परस्पर विरोध करनेवाले और असंतोष पैदा करनेवाले मानव को कुछ जोड़ने का प्रयत्न सियासत ने किया है। इसलिए हम उसके कृतज्ञ हैं। बाहरी क्षेत्र में क्यों न हो, लेकिन यह कबूल करना होगा कि सियासत ने बिखरे हुए मानव को एक करने में मदद पहुँचायी है। लेकिन अब इसके आगे शायद विज्ञान जो माँगें पेश कर रहा है, उन्हें पूरा करने की शक्ति सियासत में नहीं है। सियासत पिछड़ गयी है। इसलिए जहाँ उसने चंद मानवों को एक कर लिया, वहाँ दूसरे मानवों को अलग भी कर दिया। जहाँ उसने कुछ लोगों को जोड़ा, वहाँ दूसरों को तोड़ा-फोड़ा भी है।

मजहब के लिए इतना कहा जा सकता है कि अब वह आक्रमणशील नहीं रहा, इसलिए अब तोड़ने का काम ज्यादा नहीं करेगा। जोड़ने का काम जितना उससे बना, उतना उसने किया। अब उसमें तोड़ने की शक्ति नहीं है। लेकिन सियासत आज भी तोड़ने का काम कर रही है। सियासत ने नैशनलिज्म या राष्ट्रवाद के नाम पर जहाँ कुछ लोगों को जोड़ा, वहाँ लोगों को तोड़ा भी। एक देश में भी सियासत एक को दूसरे से अलग करती है, देश के टुकड़े करती है। मनुष्यों को जोड़ने की शक्ति वह नहीं रखती, क्योंकि वह अविश्वास पैदा करती है। एक जमाने में अविश्वास, संशय बढ़ाने में भी शक्ति थी। लेकिन अब जो जमाना आया है, उसमें अविश्वास और संशय में शक्ति नहीं रही। जैसे कि भगवान ने कहा है, "संशयात्मा विनश्यति", आज संशय से विनाश का ही रास्ता पकड़ना पड़ता है। न्यायशास्त्र में, हिन्दुस्तान के लॉजिक में संशय भी ज्ञान का एक बहुत बड़ा साधन माना गया था। ज्ञान-प्रक्रिया में संशय का बहुत बड़ा स्थान था। वैसे ही सियासत में संशय रखना, विश्वास पैदा न होने देना, इसके साथ बुद्धि का आभास होता था। अगर हम संशयवाद नहीं रखते तो बुद्धि की न्यूनता मानी जाती। इसलिए राउंड टेबल के आमने-सामने बैठते हुए भी विश्वास नहीं रखा जाता। लेकिन आज विज्ञान की वजह से तोड़नेवाली चीजें ही जोड़नेवाली बन गयी हैं। जिस प्रशान्त महासागर ने अमेरिका और जापान को दो सिरों पर अलग कर दिया था—एक को 'सुदूर-पूर्व' और दूसरे को 'सुदूर पश्चिम' कहा जाता था, उसी समुद्र ने अब दोनों को जोड़ा है, पड़ोसी बना दिया है। इस तरह जो जड़ पदार्थ तोड़नेवाले थे, वे भी आज जोड़नेवाले बन गये हैं। अब पृथ्वी से दूर चन्द्रमा भी पृथ्वी के साथ जुड़ रहा है। अब कुत्ते भी, जो कभी भी आसमान में उड़ नहीं सकते थे, उड़ रहे हैं। इसलिए इस जमाने में मनुष्य-मनुष्य के बीच संशय पैदा करनेवाली सियासत टिकनेवाली नहीं है।

दो कार्यकारी शक्तियाँ : विज्ञान और रूहानियत

इस तरह मजहब और सियासत, ये दो शक्तियाँ खत्म हो चुकी हैं। उनके दिन लद चुके हैं! थोड़ा-सा दूर से दर्शन हो तो मालूम होगा कि आगे कौन-सी शक्तियाँ काम करनेवाली हैं। अब दो शक्तियाँ काम करनेवाली हैं, जो इसके पहले भी कुछ तो काम करती ही थीं। इन दो शक्तियों में एक है विज्ञान और दूसरी रूहानियत। विज्ञान तो जब से मानव पैदा हुआ, तभी से था। जब अग्नि की खोज हुई तो ऋषियों को कितना आनन्द हुआ, इसका वर्णन ऋग्वेद में हम देखते हैं। उनको लगा कि एक परमेश्वर हमारे हाथ में आ गया। वैसे तो देवता हमें पैदा करते हैं, लेकिन इस देवता को तो हम पैदा करते हैं। इस तरह अग्नि के बारे में ऋग्वेद में बहुत उत्साह और भक्ति दीखती है। जिस जमाने में अग्नि की खोज हुई, उस जमाने वह बहुत बड़ी खोज थी। उसके बाद कई खोजें हुईं, ईजादें हुईं। अब आणविक शक्ति की खोज हुई है और मनुष्य प्रगति कर रहा है!

सन् १९४५ तक पाँच-छह साल जेल में रहते मैं चिन्तन करता रहा तो मेरे ध्यान में यह बात आयी कि आज हमें अहिंसा की जो सिखावन दी जा रही है, कई कारणों से वह हमारे लिए लाभदायी है। यह सही है कि हमारी सभ्यता में वह चीज पड़ी है। लेकिन इसके आगे अहिंसा अनिवार्य है, क्योंकि विज्ञान का जमाना आ रहा है। अहिंसा के साथ विज्ञान का विवाह हो जाय तो उससे दुनिया में मंगलमय जीवन पैदा हो सकता है, जमीन पर स्वर्ग उतर सकता है। लेकिन विज्ञान का विवाह हिंसा के साथ हुआ तो मानव और मानवता, इन्सान और इन्सानियत—दोनों मिटनेवाले हैं। इसलिए बहुत जरूरी है कि विज्ञान के साथ ऐसी शक्ति जुड़ जाय, जिससे उसे उचित मार्ग-दर्शन मिले। विज्ञान से रफ्तार, गति बढ़ती है। जहाँ रफ्तार बढ़ती है, वहाँ रास्ता ठीक मिला तो शीघ्रातिशीघ्र परम कल्याण प्राप्त हो सकता है। रास्ता गलत मिला तो उतनी ही शीघ्रता से विनाश भी हो सकता है। विकास या विनाश, दोनों शीघ्रातिशीघ्र हो सकते हैं, जो रास्ते पर निर्भर हैं। इसके आगे विज्ञान बहुत जोरों से विकसित होनेवाला है। अब तक वह धीरे-धीरे विकसित होता था, लेकिन अब जोरों से छलांग मारकर आगे बढ़नेवाला है। इसलिए उसके साथ जुड़नेवाली, उसे मार्ग-दर्शन करानेवाली कोई शक्ति होनी चाहिए। वह है रूहानियत।

रूहानियत : पुराने जमाने में

पुराने जमाने में भी रूहानियत थी। लेकिन मजहबों का उस-पर परदा पड़ा था। मजहबों ने माना था कि वे रूहानियत के ठेकेदार हैं। मानवीय जीवन का बाहरी नियन्त्रण सियासत करती थी। सियासत में मैं समाज-शास्त्र का समावेश करता हूँ। आज

www.vinoba.in

सियासत जिस नग्न रूप में खड़ी है, वैसी पहले नहीं थी। इस तरह सियासत का बाहरी आवरण था और रूहानियत को मजहबों ने बहुत अच्छी तरह ढाँक लिया था। मजहब और रूहानियत एक ही चीज हैं, ऐसा आभास होता था। वैसा भास सियासत के लिए नहीं होता था। लेकिन मजहबों ने रूहानियत को इस तरह ढाँक लिया था कि लोगों ने यह मान लिया था कि मजहब और रूहानियत एक ही चीज हैं। नहीं तो जिन लोगों ने यह माना कि शत्रु पर भी प्यार करो, उन्होंने बहुत ज्यादा शस्त्रास्त्र बढ़ाये, वे ढोंगी नहीं, बल्कि आत्मवंचक कहे जा सकते हैं। उन्होंने माना कि आज का समाज अपरिपक्व है। इसलिए सियासत और समाजशास्त्र की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ बनीं। रूहानियत पर श्रद्धा और सियासतदाँ के कारनामे, इन दोनों में जो विसंवाद स्पष्ट था, उसे लोगों ने विसंवाद के रूप में नहीं देखा। उसे विसंवाद या भेद नहीं माना, बल्कि साध्य-साधन-विवेक माना। साधन टेढ़े हों तो भी चल सकता है, ऐसा माना। इसका मुझे कश्मीर में पीरपंजाल चढ़ते समय अनुभव आया। वहाँ हम बिलकुल सीधे रास्ते से नहीं जा सकते थे, कुछ टेढ़ा रास्ता लेना पड़ता था। यह जो चढ़ने की भौतिक मिसाल है, उसे लोगों ने अध्यात्म में भी लागू किया। जैसे इंजीनियर लम्बी राह बनाता है, वैसे सियासत और समाज-शास्त्र ने टेढ़ी राह की बात रखी। उसे लोगों ने विसंवाद नहीं माना।

आज विज्ञान सर्वंकष

आज विज्ञान सर्वंकष हुआ है। मनुष्य के हाथ में भगवत्-शक्ति आयी है। भगवान का वर्णन करते हुए कहा जाता है कि उसमें उत्पत्ति, स्थिति, संहार की शक्ति है। वह शक्ति आज मनुष्य के हाथ में आ गयी है। लाशों का उपयोग मनुष्यों का संजीवन करने में होता है। लाश की आँख जिंदा मनुष्य की खराब आँख की जगह जोड़ी जा सकती है। लाश के पाँव कुष्ठ-रोगियों के खराब पाँवों की जगह जोड़े जा सकते हैं। आगे चलकर लाश के फेफड़े भी इस तरह जोड़े जायँगे। यह करीब-करीब उत्पत्ति की शक्ति है, जिसे 'संजीवनी शक्ति' कह सकते हैं। वह शक्ति करीब-करीब मनुष्य के हाथ में आ गयी है। अब थोड़ी-सी बाकी है। लेकिन मेरा विश्वास है कि उतनी भी उसके हाथ आ जायगी। यह कोई ऐसी शक्ति नहीं, जो मनुष्य के हाथ में न आ सके। फिर संहार की शक्ति उसके हाथ में आयी है, यह तो हम सब जानते ही हैं। अणु में संहार की शक्ति है, वैसे पालन की भी शक्ति है। इस तरह जहाँ उत्पत्ति, स्थिति, संहार का लक्षण मनुष्य प्रकट कर रहा है, वहाँ पुरानी सियासत और पुराने मजहब खत्म होनेवाले हैं और सीधी रूहानियत आनेवाली है। उसके टेढ़े-मेढ़े रास्ते नहीं रहनेवाले हैं। मनुष्य-मनुष्य का भेद खत्म हो जायगा। इतना ही नहीं, बल्कि आगे जाकर मनुष्य और प्राणियों का भेद भी खत्म होगा। इसलिए इसके आगे विज्ञान और रूहानियत—ये दो ही ताकतें मनुष्य के जीवन को आकार देने में समर्थ होंगी, ऐसा मुझे दर्शन हो रहा है।

साहित्य जोड़नेवाली कड़ी

इनमें एक है बाह्य शक्ति और दूसरी आन्तरिक शक्ति। इन दोनों को जोड़नेवाली कौनसी चीज हो सकती है, इसपर जब मैं सोचता हूँ तो मुझे तुलसीदास का वचन याद आता है। उन्होंने दूसरे अर्थ में उसका उपयोग किया था, पर मैं भिन्न अर्थ में कर रहा हूँ। वह है: "रामनाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार। तुलसी भीतर बाहर हूँ, जो चाहसि उजियार॥" याने अगर तू भीतर और बाहर, दोनों तरफ रोशनी चाहता है तो जिह्वा पर राम-नाम का मणि-दीप रख। रामानुज ने कहा था कि साहित्य में जितने शब्द हैं, उन सबको 'ब्रैकेट' कर एक ही अर्थ निकलता है, भगवान। हर शब्द के दो अर्थ होते हैं। जैसे यहाँ पर घड़ी है तो उसका एक अर्थ है घड़ी और दूसरा अर्थ है भगवान। लाउड स्पीकर का एक अर्थ है लाउड स्पीकर और दूसरा अर्थ है भगवान। कुल शब्दों का अर्थ भगवान होता है, इसपर रामानुज ने अपना सिद्धान्त खड़ा किया कि श्रुति के शब्दों का बाहरी अर्थ भिन्न होता हो, परन्तु आन्तरिक अर्थ एक ही है, भगवान। तुलसीदास ने उसी तरह राम-नाम की बात की। उस दोहे में राम-नाम का अर्थ मैं साहित्य लेता हूँ। मुझमें ऐसी श्रद्धा है कि रूहानियत और विज्ञान को जोड़नेवाली कड़ी अब साहित्य होगी।

> इस तरह रूहानियत, विज्ञान और साहित्य, ये तीन शक्तियाँ ही अब काम करेंगी। लोगों को आकार देनेवाली ये ही तीन शक्तियाँ होंगी। अब तक मनुष्य-जीवन को आकार देनेवाली जो शक्तियाँ थीं, उन्हें अब हटना होगा, बाज आना होगा। उन तीनों में से एक बाहरी शक्ति है, दूसरी अन्तःशक्ति है और आप बीच की शक्ति हैं, जो दोनों को जोड़ेगी, दोनों से काम लेगी।

इससे आपके ध्यान में आयेगा कि आपको मैं कितनी अहमियत देता हूँ। आपके सामने बहुत बड़ा कार्य उपस्थित है। इसलिए जो समस्याएँ मेरे मन में हैं, उन्हें मैं आपके सामने पेश करता हूँ और चाहता हूँ कि आप उनपर चिंतन करें और इसके आगे दुनिया में जो काम करना है, उसके लिए अपनी शक्ति सुरक्षित रखें। आपके पास जो शक्ति है, उसका उपयोग अनेक प्रकार से हो सकता है। लेकिन आप उसका उपयोग उनमें न करें और जो महान कार्य आपको करना है, उसके लिए सुरक्षित रखें तो भविष्य में आपके सामने जो काम आनेवाला है, उसे आपने पहचान लिया, ऐसा कहा जायगा।

मूल्यों का तर-तमभाव न मिटे

मेरे सामने जो समस्याएँ हैं, उन्हें मैं थोड़े में रखता हूँ। पहली बात यह है कि सियासत, मजहब और समाजशास्त्र ने नैतिक मूल्यों के नाम पर तर-तमभाव छोड़ दिया है। जिन नैतिक मूल्यों की कीमत कम थी, उनकी कीमत बढ़ायी है और जिनकी ज्यादा थी, उनकी कम कर दी है। इसके कारण समाज का कुल ढाँचा बिगड़ गया है। मैं आपके सामने 'लाउड थिंकिंग' (प्रकट चिन्तन) के तौर पर यह रख रहा हूँ। उसपर आपको जैसा उचित लगे, सोचिये और मार्ग-दर्शन कीजिये। साहित्य के धर्म में यह चीज आती है। मैं कहना चाहता हूँ कि नैतिक मूल्यों में सत्य से बढ़कर कोई मूल्य नहीं हो सकता। बाकी नीतिमत्ता और सदाचार के जो मूल्य हैं, वे दोयम दर्जे के हैं। लेकिन आज मनुष्य ने तय किया है कि कुछ अनीतियों और बुराइयों को पहले दर्जे की बुराई माना जाय। इसीलिए मानव उन्हें छिपाने की कोशिश करता है। लेकिन छिपाना पहले दर्जे की बुराई माननी चाहिए। हमारे हाथ से कुछ बुराई होती है, व्यभिचार होता है तो हम उसे छिपा लेते हैं। यह छिपाना उस बुराई से भी बदतर है। लेकिन आज की लोक-प्रवृत्ति यही है कि वह सत्य से ज्यादा कीमत उस प्रकार के संयम को देती है और ऐसे असंयम को असत्य से ज्यादा खराब समझती है। परिणाम यह होता है कि लोग बुराइयों को छिपाते हैं।

www.vinoba.in

मान लीजिये, मेरे पेट में बीमारी है तो मैं उसका इजहार करता हूँ। वैसे तो मुझे बीमारी से शर्मिन्दा होना चाहिए। लेकिन मैं उसे छिपाता नहीं, क्योंकि वह सुनकर आपके मन में मेरे प्रति घृणा नहीं, दया ही पैदा होती है। ज्यादा से ज्यादा आप यही मानते हैं कि इसने कुछ गलत काम किया, इसीलिए इसे यह बीमारी हुई। फिर भी आप उसे क्षम्य मानते हैं, इसीलिए मैं उसका इजहार करता हूँ। फलस्वरूप मुझे लोगों की सलाह और मदद मिलती है। लेकिन दुराचार को मैं प्रकट नहीं करता; क्योंकि जिस सहानुभूति से आप मेरी बीमारी की तरफ देखते हैं, उस सहानुभूति से दुराचार की तरफ नहीं देखते। मुझे यह हिम्मत ही नहीं होती कि आप बुरा मानें तो भी मैं उसे प्रकट करूँ। ऐसा प्रकट करनेवाला तो कोई महात्मा ही होगा। इसलिए मैं उसे छिपाता हूँ। किन्तु यह छिपाना उस दुराचार से भी बुरा है। कुष्ठरोगी अपनी बीमारी छिपाते हैं, किसीको नहीं बताते। लेकिन बीमारी बहुत बढ़ने पर बताना ही पड़ता है। फिर उसका दुरुस्त होना भी मुश्किल हो जाता है। अगर बीमारी की यह बात उसकी प्राथमिक अवस्था में ही खुलती तो वह दूर भी हो जाती। लेकिन कुष्ठरोगी उसे छिपाते हैं, क्योंकि लोगों में उसके लिए घृणा है। इसी तरह दुराचार के लिए घृणा है, इसलिए लोग उसे छिपाते हैं। लेकिन हमें समझना चाहिए कि सर्वोत्तम नीति, धर्म है—सत्य और सबसे बड़ा अधर्म है—छिपाना, असत्य। यह मूल्य जब तक हम स्थापित नहीं करते, तब तक समाज का स्वास्थ्य न सुधरेगा। मैंने आपसे कहा कि समाज के मूल्यों में तर-तमभाव नहीं रहा। किस मूल्य की क्या कीमत है, इसका अन्दाजा लोगों को नहीं लगा और गलत मूल्य सामने आया।

शब्दशक्ति की सुदृढ़ स्थापना हो

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि आज शब्द की शक्ति टूट रही है। याने लोकनेता जो बोलते हैं, वही उनके मन में भी है, इसका लोगों को विश्वास नहीं रहा है। ऐसी हालत में समाज आगे नहीं बढ़ सकता। अब 'लोकनेता' किसे माना जाय, यह सवाल उठ सकता है। लेकिन आज तो लोग ही अपने नेता चुन लेते हैं और वे लोकनेता समझे जाते हैं। फिर भी लोग उनके शब्दों पर विश्वास नहीं रखते। वे यह भी मानते हैं कि नेतृत्व के लिए यह आवश्यक है कि शब्दों का अर्थ छिपाया जाय। मेरा मानना है कि आगे की प्रगति में यह बहुत बड़ा खतरा है कि शब्दशक्ति कुंठित हो रही है। शब्दशक्ति कैसे स्थापित हो, इसकी कोशिश साहित्यिकों को करनी चाहिए।

सामूहिक साधना की जाय

तीसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि साहित्यिकों में एक दूसरे के साथ किसी प्रकार का संपर्क हो सकता है, आज यह खयाल ही नहीं रहा है या कम रहा है। वैसे उनके कई सम्मेलन तो जरूर होते हैं, फिर भी वह नहीं होता, जो मैं चाहता हूँ। वेद में एक सूक्त देख मुझे आश्चर्य लगा। वह तीन मंत्रों का सूक्त है। वेद में लिखा जाता है कि फलाने सूक्त का ऋषि वसिष्ठ है, फलाने का गृत्समद आदि। वैसे ही इन तीन मंत्रों के लिए लिखा है कि 'सहस्रं वसुरोचिषः।' मैं सोचने लगा कि तीन मंत्रों के हजार ऋषि तो लेखक हो नहीं सकते। ऋषि द्रष्टा माने जाते हैं, लेकिन तीन मंत्रों के हजार ऋषि लेखक कैसे हो सकते हैं? सोचते-सोचते मुझे लगा कि कोई एक निमित्त मात्र का लेखक होता था। उसे वे महत्त्व नहीं देते थे। लेकिन जो दर्शन होता था, वह सामूहिक ही होता था। अवश्य ही सामूहिक साधना से वह दर्शन एक मनुष्य में प्रकट होता था, फिर भी वह उस एक का दर्शन न होकर उन सबका था, जिन्होंने मिलकर तपस्या की।

हम जब वेलूर जेल में थे तो गांधीजी ने २१ उपवास किये। मेरा गांधीजी के साथ ऐसा अनबंध था कि यद्यपि मैंने ऐसी कोई प्रतिज्ञा नहीं की थी कि उन्होंने उपवास शुरू किया तो मैं भी करूँ, फिर भी उसी अनुबंध के कारण मैंने भी उपवास किये। गांधीजी का खयाल था कि 'क्विट इण्डिया' ('भारत-छोड़ो') के लिए हजारों लोग उपवास करेंगे। उन दिनों मैं गणित करता था कि इस वक्त कितने लोगों ने उपवास किये होंगे। हिन्दुस्तान भर में अन्दाजन सौ-सवा सौ लोगों ने उस वक्त उपवास किये होंगे। तीन हफ्ते के १२० उपवास याने कुल ३६० हफ्तों का याने ७ साल का उपवास हुआ। उस वक्त मैंने सहज ही कह दिया कि यह ७ साल का तप हुआ। फिर मुझे पुराणों की याद आयी। उनमें लिखा रहता है कि फलाने ऋषि ने ५२ साल उपवास किये, फलाने ऋषि ने दो हजार साल तपस्या की आदि। अक्सर कहा जाता है कि पुराणों में ऐसे बड़े-बड़े आँकड़े लिखने की आदत ही है। इसलिए उनके हजार का मतलब एक ही समझा जाय। लेकिन मेरे मन में उस वक्त विचार आया कि किसीने तीन हजार साल तपस्या की, ऐसा वर्णन हो तो उसके मानी है कि तीन हजार लोगों ने एक साल तपस्या की और एक प्रयोग आजमाया।

मेरा मानना है कि साहित्यिकों को अपनी-अपनी स्वतंत्र प्रतिभा जरूर होनी चाहिए। लेकिन उसके साथ-साथ यह भी हो कि हम सब मिलकर कोई साधन करें। उसका एक सामूहिक दर्शन होगा, जो समत्वयुक्त होगा। जिस जमाने में विज्ञान और रूहानियत का जोड़ करना है, उस जमाने में साहित्यिकों को अपने अनुभवों का निचोड़ सबके समाने रखना चाहिए और सब मिलकर सामूहिक तपस्या, सामूहिक साधना करनी चाहिए। जसे लोग संगठन कहते हैं, वह मैं नहीं चाहता। मैं संगठन का जिन्दा दुश्मन हूँ। मैं नहीं चाहता कि प्रतिभा पर कोई अंकुश हो। अगर प्रतिभा का ढाँचा बन गया और ५० आदमी इकट्ठा आये तो उन पचासों की एक प्रतिभा होगी। उसमें एक ही एक रह जायगा। उससे न मेरा बल बढ़ेगा और न आपका। लेकिन प्रतिभा पर कोई अंकुश न होने का अर्थ लोगों के विचारों का आदान-प्रदान न हो, यह नहीं होना चाहिए।

परस्पर के विचारों का अनुभव करें

मैं सिर्फ आदान-प्रदान की ही बात नहीं करता, बल्कि विचारों के अनुभव की बात करता हूँ। मेरे विचारों का आप अनुभव करें और आपके विचारों का मैं अनुभव करूँ, यह जरूरी है। इसके लिए मैं एक मिसाल देता हूँ। हम भिन्न-भिन्न धर्मग्रन्थ पढ़ते हैं। जैसे : बाइबिल, कुरान, गीता आदि। इस तरह पढ़ना एक बात है, पढ़ने में उनमें जो फर्क है, वह ध्यान में लेना दूसरी बात है और उनमें जो फर्क है, वह गौण है—यों मानकर सबमें जो एकता का अंश है, उसे पकड़ना तीसरी बात है। सिर्फ एकता को ही पकड़ना नहीं, बल्कि उनमें जो विविधता का अंश है, उसकी उपासना करना चौथी बात है। रामकृष्ण परमहंस ने इस तरह भिन्न-भिन्न धर्मों की उपासना की और एक महान अनुभव-सूत्र

www.vinoba.in

पकड़ लिया था, जो सबमें पिरोया हुआ है। इस तरह उपासना की, अनुभवों के आदान-प्रदान ही नहीं, बल्कि एकता हो और उसमें से कोई चीज निकल सकती हो तो निकले, यही मैं आपसे निवेदन करता हूँ।

मैंने आपके सामने जो विचार-तरंग रखे, उनपर सोचने की आपपर कोई जिम्मेदारी नहीं है। आपके मनमें जो है, वह भी आप सबके सामने रखें।

'अज्ञातवास' नहीं, 'अज्ञातचार'

अपनी यात्रा के सम्बन्ध में भी कुछ कहना चाहता हूँ। मैंने कहा कि मैं अज्ञातवास में जा रहा हूँ। लेकिन 'वास' कहना ठीक नहीं है। मैं 'अज्ञातचार', 'अज्ञातसंचार' कराने जा रहा हूँ। याने पहले जिस तरह दो-चार महीने का प्रोग्राम बनता था, वैसा अब नहीं बनेगा। मैं सिर्फ दो-चार दिन का ही प्रोग्राम बनाता जाऊँगा और आगे क्या करना है, कहाँ जाना है, इन सबकी आजादी मैं अपने हाथ में रखना चाहता हूँ। आठ साल तक मेरी यात्रा हुई। अब मैं फिर से उन-उन प्रदेशों में दुबारा जाऊँ तो उसी तरीके से जाऊँ, यह मेरे लिए लाभदायी नहीं है। अब मैं कहीं से कहीं भी जा सकता हूँ और कहीं जरूरत महसूस हुई तो ज्यादा दिन भी रह सकता हूँ। कोई भी कमाण्डर अपनी कैंपेन का प्रोग्राम नहीं बनाता। अब तक मेरा प्रोग्राम बनता था, लेकिन अब मैं जरा गहराई में जाना चाहता हूँ। इसीको मैंने 'अज्ञातचार' कहा है। इसलिए अभी आप सबसे एकत्रित मिलना हुआ, वैसा मिलना फिर कब होगा, पता नहीं। आप सबको मेरे बहुत भक्तिभाव से प्रणाम। ● ● ●

प्रश्नोत्तर

गुलमर्ग (जम्मू-कश्मीर) १६-७-'५९

तसव्वुर के मुख्तलिफ तजुरबे

प्रश्न :—सूफियत में तसव्वुर (साक्षात्कार) के कितने स्टेजेज हैं ?

विनोबाजी : उसके तजुरबे मुख्तलिफ होते हैं। अक्सर सूफियों ने चार स्टेजेज (अवस्थाएँ) बनाये हैं। शरीयत, तरीकत, हकीकत और मार्फत। इसमें वे सब कुछ बिठा देते हैं। लेकिन जहाँ मार्फत का सवाल आता है, वहाँ वह मार्फत एक ही किस्म की नहीं होती है, मुख्तलिफ किस्म की होती है। मूसा को आग और पहाड़ में परमेश्वर का साक्षात्कार हुआ था। इब्राहीम को यह तजुरबा हुआ कि चाँद सूरज और सितारे तो डूब जाते हैं, इसलिए डूबनेवाला अल्लाह नहीं हो सकता है। इस तरह मार्फत के तजुरबे मुख्तलिफ होते हैं। वेदान्त में उसकी आठ किस्म की स्टेजेज बयान की जाती हैं। योग में सात किस्म बयान की जाती हैं। अक्सर सात आसमानों की बात की जाती है। ये आसमान याने फिजीकल जाग्रफी की बात नहीं है। मनुष्य की रूह ऊपर उठती है तो ऊपर चढ़ते-चढ़ते आसमान में पहुँचती है, फिर और ऊपर चढ़ते-चढ़ते सात आसमान चढ़ जाती है। ये सात स्टेजेज कौन सी हैं, इसका जिक्र नहीं किया गया है।

वहदत और रहम

अक्सर यह माना गया है कि जो आखिरी स्टेज है, वह है सत्य, हक। वहाँपर रहम (करुणा) वगैरह कुछ नहीं है। कुरानशरीफ में तीन किस्म के यकीनों की बात की जाती है। इलमुल यकीन, ऐनुल यकीन और हक्नुल यकीन। रहम की हालत में आप अलग और मैं अलग। आपका दुःख मैं देखता हूँ तो मेरा दिल पसीजता है। इसलिए मैं आपको कुछ मदद करता हूँ। लेकिन आखिरी हालत में जहाँ आप और हम एक हो गये, वहाँ रहम के लिए गुंजाइश नहीं है। इसलिए आखिरी हालत वहदत, अद्वैत की है। वह ऊँची हालत है और रहम निचली हालत है। जहाँ योगी के तसव्वुर की बात है, वहाँ वहदत सबसे ऊँची हालत है। लेकिन हमारे लिए तो रहम भी ऊँची हालत है। कुरानशरीफ में तीन हालत का जिक्र आया है – सब्र, रहम और हक।

सब्र, रहम और हक

मैंने कुरानशरीफ का जो मुताला किया है, वह सरसरी तौर पर नहीं किया है। बल्कि मैंने उसके मिस्टीक एक्सपिरिएन्सेज देखे हैं। अक्सर लोग मॉरल टीचिंग्स और कानून किस्से वगैरह देखते हैं। लेकिन उसमें क्या देखना है ? झूठ मत बोलो, रहम करो, यह कौन नहीं कहता है। सब यही बात कहते हैं। इसलिए वही चीज कुरान में मिली तो क्या मिला ? अरबी सीखकर इतना वक्त जाया करके अगर सच बोलो, इतना ही हम सीखे तो हमने वाकई वक्त जाया किया। वह तो हमारी माँ ने हमें मराठी में ही सिखा दिया था। इसलिए कुरान के मिस्टीक एक्सपीरिएन्सेज देखने चाहिए। उसमें दो जुमले आते हैं। एक में कहा है "तवासौ बिल हक" व 'तवासौ बिस सब्र।' दूसरे में कहा है "तवासौ बिल हक" व 'तवासौ बिल मरहमा।' सूरे बलद में यह जाता है। इस तरह एक दफा हक के साथ सब्र है और दूसरी दफा रहम है। ये तीन तजुरबे हैं। पहले तजुरबे में सब्र है। उसके बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते। इसलिए ध्यान में पहली चीज है सब्र। फिर उसके बाद रहम, करुणा। बुद्ध भगवान को ४० फाँके करने के बाद करुणा का दर्शन हुआ। उन्होंने चारों तरफ देखा तो करुणा दिखायी दी। मूसा ने और ईसा ने भी इसी तरह ४० फाँके किये थे। बुद्ध भगवान ने यह उसूल बताया कि वैर से वैर घटेगा नहीं, बल्कि बढ़ेगा। इसमें उन्हें जो दर्शन हुआ, वह रहम का था। लेकिन आखिरी हालत में रहम भी नहीं है, हक है। क्योंकि वहाँ दो चीजें नहीं रहती हैं, एक ही चीज रहती है।

मंसूर और शंकराचार्य का एक ही तजुरबा

मंसूर कहता था कि "अनल हक" मैं ही हक हूँ। खुदा हक है, यह कहने में किसीको उज्र नहीं है। लेकिन जब इन्सान कहता है कि मैं हक हूँ तो वह ज्यादती मानी जाती है। लेकिन शंकराचार्य ने भी ऐसा ही कहा है कि खुदा और हम एक ही हैं। अक्सर यह सवाल उठाया गया है कि खुदा और हम एक हैं या अलग हैं। उसका जवाब यह है कि हम एक भी हैं और अलग भी हैं।

www.vinoba.in

आदम खुदा नहीं है, लेकिन खुदा के नूर से जुदा नहीं है। कुरान में यह भी बात है। यह जो तजुरबा होता है, वह चाहे नशे में भी हो, लेकिन उससे इन्कार नहीं किया जा सकता। मंसूर को नशे में तजुरबा हुआ, ऐसा कहा जाता है। मुझे आज भूख लगी तो उसका इन्कार कोई नहीं कर सकता है। इस तरह नशे में भी किसीको यह तजुरबा हो कि "मैं वह हूँ" तो वह इमेजिनेशन की फ्लाइट है। फिर चाहे नशे के बाद वह इबादत भी करे, लेकिन उसको वह जो तजुरबा हुआ, वह सच है। मंसूर इतनी ऊँची हालत में था कि इबादत से भी ऊँचा था। उसका नशा निचली हालत पर नहीं था, बल्कि ऊँची हालत पर था। कहा गया है कि नमाज, सलात, इबादत—ये जो हैं, ये बहुत सी बुराइयों को दूर करते हैं, लेकिन अल्लाह का जिक्र उससे भी बढ़कर है। "जिकुल्लाहो अकबर" अल्लाह का जिक्र अल्लाह की सलात से अकबर है, बड़ा है। याने अन्दर से उसकी जो याददाश्त सहज ही होती है, वह बहुत बड़ी है। ऐसे बैठो, ऐसे उठो, यहाँ रुको—यह सारा नाटक नहीं करना पड़ता है और चलते-बोलते, खाते-पीते वह जिक्र अन्दर पड़ा ही है तो वह बहुत बड़ी बात है। हम चलते हैं तो साँस लेने का काम चलता ही है। हर काम के साथ हम साँस लेते हैं। वैसे ही हर काम के साथ अल्लाह का जिक्र हो, यह है असली चीज। लेकिन यह सबको सधता नहीं है, इसलिए मश्क (अभ्यास) के तौर पर पाँच दफा नमाज की बात कही है। लेकिन जब इन्सान उतनी ऊँची हालत में पहुँचेगा तो एक लमहा ऐसा होगा, जब उसे यह तजुरबा होगा कि 'अनल हक', मैं वह हूँ।

व्याख्या में 'अनल हक'

आप यह पूछ सकते हैं कि इसकी प्रैक्टिकल वैल्यू क्या है? लेकिन भूमिति में जहाँ आप बिन्दु की व्याख्या करने बैठते हैं, वहाँ यह कहते हैं कि बिन्दु वह है, जिसे लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई है नहीं। लेकिन आप बोर्ड पर बिन्दु की शक्ल दिखाते हैं, तो वहाँ तीनों चीजें होती हैं। लेकिन व्याख्या में हम यह कबूल करने के लिए तैयार नहीं हैं कि बिन्दु वह है, जिसे कुछ लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई है। क्योंकि वह कबूल करेंगे तो भूमिति खत्म हो जायगी। इसलिए जहाँ हम व्याख्या करने बैठते हैं, वहाँ यह कहेंगे कि 'अनल हक', अल्लाह और हम एक हैं। लेकिन व्यवहार में तो वह और हम अलग-अलग हैं। फिर भी व्याख्या में वह और मैं एक हूँ। चाहे ऐसी चीज दुनिया को देखने को न मिले तो भी वह दुनिया की बुनियाद है। कुरानशरीफ में कहा है "योमेनुल बिल गैबे" जो दीखता नहीं है, उसपर यकीन रखो। यह बहुत बड़ी बात है। यकीन का अर्थ अनुभूति में नहीं निकलेगा। यकीन याने निष्ठा, कन्विक्शन, जो बुद्धिगत चीज नहीं है। बुद्धिगत तो डिटरमिनेशन है। यकीन याने ज्ञान का विज्ञान होना। सूफी और वेदान्ती बिलकुल नजदीक आते हैं। आप दोनों का लफ्ज-ब-लफ्ज तरजुमा कर सकते हैं।

मुसलमानों का 'ओल्ड टेस्टामेन्ट' वेद और उपनिषद

मैंने कई दफा मुसलमानों के साथ बात करते हुए समझा दिया है कि तुम लोग जरा समझो कि तुम्हारा ओल्ड टेस्टामेन्ट क्या है। तो तुम हिंदुस्तान की खूबियों को हजम करोगे। तुम्हारा न्यू टेस्टामेन्ट कुरानशरीफ है। लेकिन ओल्ड टेस्टामेन्ट वेद और उपनिषद है। यह सारा जो पुराना अनुभव चला आया है, उसी का जिक्र करते हुए कुरानशरीफ में कहा है कि "कुछ रसूलों के नाम मैंने तुझको सुनाये हैं और कुछ रसूलों के नहीं सुनाये हैं। याने ऐसे कई रसूल हैं, जिनके नाम तू नहीं जानता है। लेकिन ऐसे सब रसूलों की एक जमात है।" अल्लाह रसूलों को ऐड्रेस कर रहा है कि "ऐ रसूलो, तुम सब एक जमात हो।" इन्सान की एकता के लिए यह बहुत बड़ी चीज बन जाती है। यह चीज हमारे ध्यान में आये तो बहुत सारे झगड़े मिट जायँगे। फिर हम एक-दूसरे के तजुरबे शेयर करेंगे। जैसे आज साइन्स में होता है।

साइन्स और रूहानियत अनन्त प्रक्रिया

साइन्स इन्फिनिट प्रोसेस है। साइन्स कभी यह नहीं कहता है कि 'दस फार ऐन्ड नो फरदर।' बल्कि वह कहता है कि अनन्त का एक अंश ही हम समझे हैं। अभी बहुत समझने का बाकी है। वैसे ही रूहानियत में भी अभी बहुत समझने का बाकी है। हमें यह समझना चाहिए कि किताबें हमें एक हद तक आगे ले जाकर फिर रोकती हैं, इसलिए फिर "किताबें डाल पानी में, पकड़ दस्तू फरिश्तों का" कहना पड़ता है। कुरानशरीफ में जो "उम्मुल किताब" की बात आयी है, वह बुनियादी चीज है। बाकी जो भी चीजें हैं, उनके मुख्तलिफ इंटरप्रिटेशन्स हो सकते हैं, जो अल्लाह ही जानता है। इसलिए हमें "उम्मुल किताब" को ही पकड़े रखना चाहिए।

साइन्स के जमाने में छोटे-छोटे रिवाज नहीं टिकेंगे

इबादत के लिए मुँह किधर करना चाहिए, यह भी कोई बात है? मशरिक (पूर्व) की तरफ करो या मगरीब (पश्चिम) की तरफ करो। अल्लाह के लिए उसमें कोई फर्क नहीं है। ऐसी छोटी-छोटी चीजें रिवाज के तौर पर आ जाती हैं और फिर उसीको मजहब मानकर उसका उसूल बनाया जाता है और झगड़े चलते हैं। मदेसाहेबा और तबर्रा के झगड़े—यह भी कोई धर्म है। क्या निन्दा और स्तुति करना कोई धर्म है? एक ही दिन मैं निन्दा करता चला जाऊँ, आप स्तुति करते चले जायँ—यह सब क्या है? साइन्स के जमाने में यह सब नहीं टिकेगा। साइन्स एक ऐसी चीज है, जो हमें ऐसे छोटे-छोटे खयालात, जो बुनियाद हैं, छोड़ने के लिए मजबूर करेगा। यह साइन्स का बड़ा उपकार है। मैंने देखा है कि कुरान में जहाँ-जहाँ कुदरत कैसे बनी, इसका जिक्र आया है, वहाँ साइन्स के खिलाफ बात नहीं आयी। कुरान में कहा है कि अल्लाह ने जोड़े पैदा किये। सिर्फ इन्सान में ही नहीं, बल्कि हर चीज में पैदा किये। यह बिलकुल साइन्टोफिक चीज है। निगेटिव और पाजिटिव बिजली को यह बात लागू होती है। अब तक मुझे कुरान में ऐसी चीज नहीं दीखी, जो साइन्स के खिलाफ हो। अगर दिखेगी तो बताऊँगा।

मैंने १९४९ में पहली दफा कुरान पढ़ी। पहले तो सेल का अंग्रेजी तरजुमा पढ़ा। फिर महम्मदअली का तरजुमा पढ़ा, जो अच्छा है, लेकिन सेक्टेरियन है। फिर यूसुफअली की लंबी कामेंटरी पढ़ी और उसके बाद पिकथाल का तरजुमा पढ़ा। उसकी अंग्रेजी अच्छी है। जब मैंने कश्मीर में प्रवेश किया, तब अहमदियावालों का शायाकिया हुआ तरजुमा देखा। उसका तरजुमा रद्दी है, लेकिन टेक्स्ट का प्रिंटिंग सबसे सुन्दर है। अंग्रेजी तरजुमे पढ़ने के बाद मैंने अरबी पढ़ना शुरू किया था। एक-एक लफ्ज पढ़ूँ और याद न रहे, आँख को तकलीफ भी हो, इसलिए मैं सब नागरी में लिख लेता था तो फिर याद हो जाता था। उर्दू से मुझे अरबी ज्यादा आसान मालूम होती है। क्योंकि उर्दू में जेर, जबर नहीं होता है। जेल में मेरे टेबल पर एक उर्दू किताब पड़ी थी। एक मुसलमान भाई उसे दिलचस्प किताब समझकर ले गये और फिर

www.vinoba.in

दूसरे दिन मायूस होकर उसे लौटाते हुए उन्होंने कहा कि मैंने समझा था कि यह 'बनियों के किस्से" होगा। लेकिन निकला "नबियों के किस्से"। उसपर से मैंने अरबी पढ़ना, यसलुले कुरान का प्रिंटिंग अच्छा है, तरजुमे के साथ मिलाकर शुरू किया। जुम्मे के दिन रेडियो पर २० मिनट कुरान चलती थी। वह मैं जेल में सुनता था। उसपर से मैंने तलफ्फुज (उच्चारण) पकड़ लिये। १९४९ से लेकर आज तक मैं कुरान पढ़ता हूँ। बीच-बीच में छोड़ देता हूँ। क्योंकि भूलने में भी लाभ होता है। भूलने से यह फायदा होता है कि हमें जो अच्छी तरह हज्म हुआ है, उतना ही याद रहता है। सतत पढ़ते रहने से हर जुमले की कीमत का पता नहीं चलता है। अमावास्या के रोज कुल सितारे दीख पड़ते हैं, लेकिन आपको देखना हो कि कौन सितारे अहम् हैं तो अष्टमी को देखो। पूर्णिमा के दिन तो चाँद ही दीखता है, सितारे नहीं। इसलिए जैसे सतत पढ़ते रहना—यह एक तरीका है, वैसे ही बीचबीच में छोड़ते जाना, भूलते जाना यह भी एक तरीका है। ● ● ●

प्रातः प्रवचन

पट्टी (पंजाब) १५-११-'५९

अज्ञात-चार की फलश्रुति : सज्जन-मंडली बनाना

[विनोबाजी के अज्ञातवास के समाचार से देश में खलबली मच गयी। अखबारों में छपी गलत रिपोर्ट के कारण कार्यकर्ताओं के मन में भी संभ्रम पैदा हुआ। लोगों की तरफ से जगह-जगह सवाल किये गये : 'क्या विनोबाजी की पदयात्रा बन्द होगी? क्या भूदान-ग्रामदान का काम बंद होगा? क्या वे हिमालय या किसी अज्ञात स्थान में जायँगे?' इस सम्बन्ध में स्पष्टीकरण करते हुए साहित्यकार-परिषद्, अमृतसर में विनोबाजी ने कहा : "मेरा अज्ञातवास नहीं, अज्ञातचार अज्ञात-संचार होगा।"

अमृतसर के बाद दो दिन यात्रा पहले तय किये हुए कार्यक्रम के अनुसार ही चली। १४ नवम्बर को 'तरनतारन' में फिरोजपुर जिले के कार्यकर्ता भावी कार्यक्रम के बारे में चर्चा करने के लिए इकट्ठा हुए। पुराने कार्यक्रम के मुताबिक १५ को 'कैरों' गाँव में पड़ाव था और १६ को पट्टी में। विनोबाजी ने कहा 'अज्ञात-संचार आरम्भ होगा तो पुराना कार्यक्रम नहीं चलेगा। कुछ तो तोड़ना ही होगा। इसलिए कल मैं कैरों नहीं जाऊँगा, सीधा पट्टी जाऊँगा।'

१५ तारीख को गुरु नानक-जयन्ती के शुभ दिन प्रातः १३ मील का रास्ता तय करके वे नौ बजे पट्टी पहुँचे। वहाँ अपने प्रातःकालीन प्रवचन में विनोबाजी ने प्रस्तुत विचार व्यक्त किये। —सं०]

काम की गहराई प्रकट करने का तरीका

पुराने कार्यक्रम के मुताबिक मुझे इस गाँव में आज नहीं, कल आना था। लेकिन मैंने कार्यक्रम बदला। आज मैंने यह कार्यक्रम क्यों बदला? अक्सर मैं पहले जाहिर किये हुए कार्यक्रम में फर्क करना उचित नहीं समझता। ८॥ साल की यात्रा में मैंने जाहिर किया हुआ कार्यक्रम ही चलाया। गर्मी हो, सर्दी हो या और कोई मुश्किल हो, जोरों की बारिश हो, तब भी मैंने कार्यक्रम में हेर-फेर नहीं किया, बुखार आया, तब भी नहीं। लेकिन मैंने आज कार्यक्रम तोड़ा है, इससे दो गाँवों का कार्यक्रम टूटा। अभी तक मेरा जो यात्रा का सिलसिला था, उसमें मैं अब फर्क करना चाहता हूँ। आसाम छोड़कर हिंदुस्तान के सभी सूबों में हमारी यात्रा हो चुकी। अब हम किसी भी सूबे में जायँगे तो वहाँ जाना दुबारा हुआ, ऐसा होगा। इसलिए अब फिर पुराने ही ढंग से जाना मुझे ठीक नहीं लगा।

साढे आठ साल की यात्रा में एक फिजा तैयार हुई। लेकिन सिर्फ विचार-प्रचार से काम नहीं बनता। जब विचार के साथ अमली चीज होती है तो विचार पकड़ में आता है। विचार की जड़ जिंदगी में गहरी चली जाती है। इसीलिए मैं विचार के साथ भूदान-ग्रामदान का काम लेकर घूमता रहा। अब तक मेरी यह यात्रा, अच्छे अर्थ में एक जुलूस ही था। इससे एक फिजा तैयार हुई। करोड़ों लोगों ने हमारी बात सुनी। जिन्होंने मेरे मुख से नहीं सुना, उन्होंने दूसरों के मुख से सुना। थोड़े ही लोग रहे होंगे, जिनके कानों तक हमारा विचार नहीं पहुँचा होगा। इसलिए मैंने सोचा कि अब पहले जैसा कार्यक्रम नहीं बनाऊँगा। २-४ दिन का ही बनाऊँगा। ज्यादा से ज्यादा सात दिन का बनाऊँगा। कहीं से कहीं भी जाने के लिए मैं आजाद रहूँगा। अपनेको किसी तरह कैद किये बिना जहाँ-जहाँ जाना जरूरी है, जहाँ जाने से कोई अमली काम बनेगा, काम की बुनियाद बनेगी, वहाँ जाने के लिए मैं आजाद रहूँगा। इससे कुछ काम की गहराई प्रकट होगी।

हमारा मुख्य काम क्या होगा?

अब आवश्यकता है कि इस विचार को अपनी जिंदगी में लानेवाले और समाज में घूम-घूमकर सबके पास विचार पहुँचानेवाले कार्यकर्ता खड़े किये जायँ, उनको कुछ तालीम देने का इंतजाम किया जाय। आगे वे किस तरह काम करें, इसका मार्गदर्शन किया जाय। उनके योगक्षेम के लिए योजना बनायी जाय। अब भी मैं जुलूस जैसा घुमूँगा तो यही होगा कि जहाँ भी मैं जाऊँगा, वहाँ एक लमहे के लिए बिजली और दूसरा लमहा आया तो अन्धेरा। कभी-कभी यह होता है कि बिजली से आँखें चौंधिया जाती हैं, इसलिए उसके बाद ज्यादा अन्धेरा मालूम होता है। हमारे बाद कोई कार्यकर्ता वहाँ पहुँचे तो लोग कहेंगे कि 'बाबा आया तो भी कुछ नहीं हुआ तो तुम्हारे आने से क्या होगा?' इसीलिए मैंने सोचा कि पहले जैसी यात्रा न करते हुए लोक-हृदय के साथ संपर्क करूँ, सज्जन-संगति प्राप्त करूँ। सज्जनों से मिलाप ऐसे जुलूस से नहीं होता है। सज्जनों के लिए खास समय देना पड़ता है। हमारी यही कोशिश रहेगी कि जगह-जगह सज्जन-मण्डली बने, जो हमारे जाने के बाद काम करे। अक्सर यह होता है कि समाज में जिनका दर्जा, स्टेटस है, जो गण्यमान्य हैं, वे हमारा स्वागत करते हैं, लेकिन उनके पास अपने काम होते हैं। इसलिए जो गण्यमान्य नहीं, बल्कि जो सज्जन हैं, शीलवान, चरित्रवान हैं, जो निष्काम सेवा करना चाहते हैं, प्रतिष्ठा के खयाल

www.vinoba.in

से या पार्टी का काम बने, इस खयाल से नहीं, बल्कि दुनिया का भला हो, सौजन्य की सुगंध फैले, इसलिए समाज में जिनकी सेवा की जरूरत है, ऐसों की सेवा में दौड़े जाने की करुणा, रहम से जिनके हृदय भरे हों, ऐसे सज्जन जहाँ-जहाँ पड़े हो, किसी गोशे में पड़े हों, लोग उन्हें जानते न हों तो भी उन्हें ढूँढ़ना होगा। सज्जन-मण्डली बनाना—यह अब हमारा मुख्य काम होगा।

इन दिनों लोग सियासत से ऊब गये हैं। यह सियासत इतनी मनहूस है कि कुल वातावरण को दूषित करती है। आज सार्वजनिक काम में भी मान, प्रतिष्ठा की इच्छा, झगड़े, मत्सर आदि चलते हैं। इसलिए सज्जन सार्वजनिक काम से ऊब गये हैं। वे कहते हैं कि हमें अकेले काम करने की बात बताइये, सार्वजनिक काम की नहीं। जिनके दिल में हमदर्दी करुणा है, ऐसे सज्जन हिंदुस्तान के गाँव-गाँव में पड़े हैं, उन्हें खींचना चाहिए। उनके मन में सर्वोदय-विचार पहुँचेगा तो यह काम फैलेगा। इसलिए मैं नये ढंग से यात्रा करना चाहता हूँ।

पदयात्रा के आदर्श

आज गुरु नानक का जन्मदिन है। क्या वे घूमते थे तो उनका दो-चार महीने का प्रोग्राम बनता था? जिस तरीके से गुरु नानक, कबीर, नामदेव घूमे, वही दर असल हमारा तरीका होना चाहिए था। यह बात ठीक है कि इस जमाने में कई साधन उपलब्ध हैं, इसलिए हमारे लिए एक दिन में जितनी तैयारी हो सकती है, उतनी बाबा नानक के लिए नहीं हो सकती थी। उन लोगों को जो मुसीबतें झेलनी पड़ी थीं, उतनी सब हमें नहीं झेलनी पड़ेंगी। इसीलिए हम पुराने यात्रियों के जैसा चातुर्मास में विश्राम नहीं लेते, बल्कि बारिश में भी घूमते हैं।

बचपन में हमने स्वामी रामतीर्थ की किताबें पढ़ी थीं। उसमें से एक चीज मुझे चिपक गयी। उन्होंने कहा कि 'मैं नगद धर्म चाहता हूँ, उधार नहीं।' दान दो तो मरने के बाद स्वर्ग मिलेगा, यह उधार धर्म की बात हुई। हमने प्यासे को पानी पिलाया तो प्यासा भी खुश होता है और हमें भी उसी क्षण प्रसन्नता महसूस होती है—यह नगद धर्म है। मरने के बाद प्रसन्नता मालूम होती तो वह उधार धर्म की बात होती। हम चाहते हैं कि हम यहाँ आये हैं तो आज इस गाँव में नगद धर्म का काम हो। कार्यकर्ता आज दिनभर घूमे और शाम की सभा में मुझे उन्होंने सुनाया कि इस गाँव में कितने भूदान, संपत्तिदान हुए, सर्वोदय-पात्र बने, साहित्य-बिक्री हुई। ● ● ●

प्रार्थना-प्रवचन

हीरानगर (कठुआ) १७-९-'५९

तालीम के तीन आवश्यक विषय

आज कुछ भाई सुबह हमसे मिलने आये थे। यहाँ स्कूलों में जो तालीम दी जाती है, उसके बारे में हमने जानकारी पूछी। उसमें वही पाया, जो कश्मीर-वैली में था। हमें मालूम ही था कि दोनों जगह बहुत फर्क नहीं हो सकता। दोनों एक ही प्रदेश के हिस्से हैं। फिर भी पूछा तो मालूम हुआ कि तालीम में अंग्रेजी अनिवार्य है और गणित तथा इतिहास भी। तीनों के लिए हफ्ते में ३६ 'पीरियड' चलेंगे, बाकी १२ 'पीरियडों' में विद्यार्थी कोई भी दो विषय ले सकता है। इनमें हिन्दी, उर्दू, अरबी, फारसी, संस्कृत, विज्ञान और चित्रकला—इतने विषय रहते हैं। नतीजा यह होता है कि कई बच्चे विज्ञान और चित्रकला ले लेते हैं। इस जमाने में विज्ञान विषय कौन नहीं लेगा?

अंग्रेजी का यह मोह

यह सारा सुनकर मुझे अच्छा नहीं लगा। शायद ही ऐसा कोई देश हो, जहाँ बाहर की भाषा अनिवार्य हो और अपने देश की भाषा अनिवार्य न हो। जर्मनी में जर्मन भाषा लाजमी है, इंग्लैण्ड में इंगलिश, चीन में चीनी और जापान में जापानी। दुनिया के हर देश में उस-उस देश की भाषा लाजमी तौर पर बच्चों को सिखायी जाती है। बाकी विषय अनिवार्य नहीं होते। जहाँ अंग्रेजी सिर पर लादी जाती है, वहाँ वे उसे बिलकुल नहीं सीखते, ऐसा नहीं, थोड़ा सीखते भी हैं। पर आखिर अंग्रेजी सीखकर बच्चों को मिलता क्या है? लेकिन अगर वह थोड़ी-थोड़ी लादी जाय तो बच्चे उसे फेंक देंगे। इसलिए उसे अनिवार्य बना दिया गया है। किन्तु इससे बच्चों को उर्दू, संस्कृत और हिन्दी का ज्ञान नहीं होगा। नतीजा यह होगा कि उनकी विचार-शक्ति कुंठित हो जायगी। एक भी भाषा ठीक से न आये तो व्यवहार नहीं कर सकेंगे।

तीन माँगें की जायँ

इसके लिए उपाय यही है कि गाँव-गाँव में सभा करके यह मुतालबा (माँग) करना चाहिए—हमें राष्ट्रभाषा हिन्दी या उर्दू सिखाइये। मैं इन दोनों में कोई फर्क नहीं करता। यही जबान मैं कश्मीर-वैली में बोलता तो उर्दू मानी जाती थी और यहाँ हिन्दी मानी जाती है। कहीं संस्कृत ज्यादा बोलूँ तो वह हिन्दी और अरबी ज्यादा बोलूँ तो वह उर्दू बन जाती है। दोनों एक ही हैं। सचमुच बच्चों पर अंग्रेजी लादी जा रही है कि वे कमजोर हो रहे हैं। इसलिए आप लोग यही मुतालबा करें कि हिन्दी भाषा लाजमी हो। नहीं तो बच्चे बेकार बनेंगे और काफी बातें उन्हें नहीं सिखायी जायँगी। उनकी जिन्दगी में चैन और सुख नहीं आयेगा। इसलिए यह भी मुतालबा होना चाहिए कि खेती और बुनाई भी तालीम में हो। कम-से-कम खेती जरूर हो।

[चालू]

अनुक्रम

१. साहित्य का धर्म
अमृतसर ११ नवम्बर '५९ पृष्ठ ७८७
२. तसव्वुर के मुख्तलिफ तजुरबे
गुलमर्ग १६ जुलाई '५९ ,, ७९१
३. अज्ञात-चार की फलश्रुति : सज्जन-मंडली बनाना
पट्टी १५ नवम्बर '५९ ,, ७९३
४. तालीम के तीन आवश्यक विषय
हीरानगर १७ सितम्बर '५९ ,, ७९४

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी।

www.vinoba.in